हिंदुओँ के शिक्षण संस्थानों पर सरकारी शिकंजा

राष्ट्रवादी कहलाने वालों की सत्ता में उन के वैचारिक समर्थकों, एक्टिविस्टों की विचित्र दुर्गति है। वे उसी तरह असहाय चीख-पुकार कर रहे हैं, जैसे कांग्रेसी या जातिवादियों के राज में करते थे। चाहे, वह मंदिरों पर राजकीय कब्जा हो, संविधान की विकृति हो, या शिक्षा-संस्कृति में हिन्दू विरोधी नीतियाँ हों। वे आज भी शिक्षा में हिन्दू विरोधी पक्षपात को दूर करने के लिए रो रहे हैं।

ये भी पढ़िये – मंदिरों पर सरकारी शिकंजा क्यों ?

इस पक्षपात का उदाहरण 'शिक्षा का अधिकार कानून, 2009' (आर.टी.ई) भी है। जिस ने गरीब बच्चों को शिक्षा देने का भार केवल हिन्दुओं पर डाल दिया। अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थानों को इस से मुक्त रखा जिन की संख्या हजारों में है। उन्हें सरकारी अनुदान भी मिलता हो, तब भी उन पर आर.टी.ई लागू नहीं। जबकि हिन्दुओं द्वारा चलाए जा रहे स्कूल सरकारी अनुदान न भी लेते हों, तब भी उन्हें एक चौथाई सीटों पर नि:शुल्क प्रवेश देना पड़ता है। यह फिर दोहरे जुल्म का उदाहरण है। हिन्दुओं द्वारा चलाए स्कूलों में चौथाई बच्चों का खर्च स्कूल को उठाना पड़ता है। गरीबों वाली सीटों पर भी प्रवेश तय करने का अधिकार स्कूल को नहीं, बल्कि राजकीय अधिकारियों को है। किसी कारण वे सीटें नहीं भरीं, तब भी उन्हें खाली रखना होगा।

इस के अलावा भी हिन्दुओं के स्कूलों पर सरकारी निर्देश, तरह-तरह के नियम बढ़ते गए हैं। उस में फीस संरचना, शिक्षकों के वेतन, छात्रों को प्रवेश की शर्तें, आदि तक तय करना शामिल है। यह खुला हिन्दू-विरोधी भेद-भाव है। क्योंकि यह सब स्कूल चलाने वाले का धर्म देख कर तय किया गया है। अरबपति क्रिश्चियन मिशनरी संस्थान भी उन नियमों से मुक्त हैं, जबकि साधारण हिन्दू स्कूल भी उन से बाध्य है। गोवा में आधे स्कूल मिशनरियों द्वारा संचालित हैं। केरल में उन की संख्या और अधिक है। उन के सामने हिन्दू स्कूलों का अस्तित्व ही खतरे में है।

आर.टी.ई के अन्य नियम भी हिन्दू स्कूलों पर चोट कर रहे हैं। जैसे, अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थान किसी को भी प्रवेश दे सकते हैं। वे अपने समुदाय को संपूर्ण आरक्षण दे सकते हैं। कुछ मिशनरी स्कूलों में इसे हिन्दुओं का धर्मांतरण कराने के लिए भी इस्तेमाल हो रहा है! यह कह कर कि 'सामान्य केटेगरी में सीट खाली नहीं, पर क्रिश्चियन वाली सीटें बची है। यदि क्रिश्चयिन बन जाओ तो एडमिशन मिल जाएगा।' यह पुरानी तकनीक है, जिसे गाँधीजी ने मिशनरियों की सेवा, अस्पताल, स्कूल, आदि को 'मछली

फँसाने के लिए चारे' का नाम दिया था।

अल्पसंख्यक संस्थान किसी को भी शिक्षक नियुक्त कर सकते हैं, उन पर न्यूनतम योग्यता शर्ते नहीं है। शिक्षकों को कुछ भी वेतन दे सकते हैं, उन पर पे-कमीशन लागू नहीं है। जो हिन्दुओं द्वारा चलाए जा रहे स्कूलों पर है। यानी, हिन्दुओं को अधिकार नहीं रहा कि वे भी 'ऊँचे', 'साधारण' या 'सस्ते' स्कूल खोल सकें। जबकि अल्पसंख्यक संस्थानों को हरेक छूट है।

अभी दिल्ली में सरकार ने फीस बढ़ाने पर पाबंदी लगा दी है। गत महीनों में अनेक बच्चे कई महीने से फीस नहीं दे रहे। पर हिन्दुओं द्वारा चलाए जा रहे स्कूल उन का नाम नहीं काट सकते। सरकारी हुक्म है। एक हिन्दू संचालित स्कूल के व्यवस्थापक ने कहा, "इस महीने शिक्षकों-कर्मचारियों को वेतन देने के लाले पड़ गए हैं।" इस प्रकार, प्रवेश, नियुक्ति, आरक्षण, वेतन, फीस, आदि किसी चीज में अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थानों पर कोई सरकारी नियम बाध्यकारी नहीं। जबकि निम्नतम समुदाय के हिन्दू व्यक्ति/संस्था को भी छूट नहीं कि वह अपने समुदाय के लिए सीट सुरक्षित रखे। इस तरह, आर.टी.ई तरह-तरह से हिन्दुओं के विरुद्ध भेदभाव करता है। फलतः हिन्दुओं द्वारा चलाए जा रहे स्कूल बंद हो रहे हैं। अब तक लगभग चार हजार बंद हो चुके थे।

ध्यान रहे, अब शिक्षा लगभग पूरी तरह व्यवसाय में बदल चुका। ऐसी स्थिति में आर.टी.ई केवल हिन्दुओं पर लागू होना उन्हें इस व्यवसाय से बाहर करने का दबाव ही है। एक तरह का जजिया टैक्स, जो केवल हिन्दुओं पर है। क्या यह हिन्दुओं पर धर्मांतरित होने का दबाव या प्रलोभन नहीं, जैसा मुगल काल में था? क्योंकि जैसे ही कोई स्कूल या कॉलेज चलाने वाला हिन्दू धर्म बदल कर मुसलमान/क्रिश्चियन हो जाए, वह अपने संस्थान में गरीबों के लिए 25 प्रतिशत निःशुल्क प्रवेश समेत सभी शर्तों, नियमों से मुक्त हो जाएगा! स्कूल की स्थिति के अनुसार यह राशि सालाना लाखों, करोड़ों में हो सकती है, जो किसी स्कूल या कॉलज को इसलिए देनी पड़ेगी, क्योंकि वह हिन्दू संचालित है!

इस पर सारे राजनीतिक दल, न्यायालय और मीडिया सभी चुप हैं। जबकि बीच-बीच में मानते हैं कि सेक्यूलरिज्म के नाम पर हिन्दुओं के विरुद्ध अन्याय हो रहा है। गत दशकों में सारी गड़बड़ी संविधान के अनुच्छेद 26-30 की विकृति करके की गई। इस की संविधान निर्माताओं ने कल्पना तक नहीं की थी। संविधान में 'अल्पसंख्यक' शब्द का कई बार प्रयोग है, जबकि 'बहुसंख्यक' का नहीं। अर्थ यह न था कि वे बहुसंख्यक को वंचित रखना चाहते थे। वे मानकर चल रहे थे कि बहुसंख्यकों को तो अधिकार रहेंगे ही! उन्हें चिंता थी कि 'अल्पसंख्यक' को भी सब के बराबर अधिकार मिले रहें। इसलिए अनुच्छेद 30 लिख कर यह पक्का किया गया। उस के उपबन्ध-2 से स्पष्ट है कि संविधान की यही भावना थी।

किन्तु हिन्दू नेताओं, संगठनों की मूढ़ता और हिन्दू-विरोधियों की धूर्तता ने धीरे-धीरे उन अनुच्छेदों का यह अर्थ कर दिया कि अल्पसंख्यकों को ऐसे अधिकार हैं जो गैर-अल्पसंख्यकों यानी हिन्दुओं को नहीं हैं। किसी ने उस के विरुद्ध आवाज नहीं उठाई। वही आर.टी.ई कानून पर भी हुआ।दशकों से हिन्दू संगठन मानो अफीम खाकर पड़े हुए हैं। वरना अनुच्छेद 26-30 वाली विकृति जारी नही रह सकती थी। जिसे केवल प्रस्ताव पास कर सब के लिए समान घोषित करना है। मजे की बात यह कि ऐसा विधेयक मुस्लिम नेता सैयद शहाबुद्दीन ने दसवीं लोक सभा में अप्रैल 1995 में रखा था। उन्होंने संविधान के

अनुच्छेद 30 के उपबन्धों में जहाँ-जहाँ 'सभी अल्पसंख्यक' लिखा हुआ था, उसे बदल कर 'भारतीय नागरिकों का कोई भी वर्ग' करने का प्रस्ताव दिया था।

उस विधेयक (नं 36/1995) के उद्देश्य में शहाबुद्दीन ने लिखा था कि अभी अनुच्छेद 30 केवल अल्पसंख्यकों पर लागू किया जाता है। जबकि, "एक विशाल और विविधता भरे समाज में लगभग सभी समूह चाहे जिन की पहचान धर्म, संप्रदाय, फिरका, भाषा और बोली किसी आधार पर होती हो, व्यवहारिक स्तर पर कहीं न कहीं अल्पसंख्यक ही है, चाहे किसी खास स्तर पर वह बहुसंख्यक क्यों न हो। आज विश्व में सांस्कृतिक पहचान के उभार के दौर में हर समूह अपनी पहचान के प्रति समान रूप से चिंतित है और अपनी पसंद की शैक्षिक संस्था बनाने की सुविधा चाहता है। इसलिए, यह उचित होगा कि संविधान के अनुच्छेद 30 के दायरे में देश के सभी समुदाय और हिस्से सम्मिलित किये जाएं।"

शहाबुद्दीन ने उस में यह भी लिखा था कि जो बहुसंख्यकों को प्राप्त नहीं, वैसी सुविधा अल्पसंख्यकों को देने के लिए अनुच्छेद 30 की निन्दा होती रही है। अत: बहुसंख्यकों को भी अपनी शैक्षिक संस्थाएं बनाने, चलाने का समान अधिकार मिलना चाहिए। यह हिन्दू नेताओं की अचेतावस्था का प्रमाण है कि वह विधेयक यूँ ही पड़ा-पड़ा खत्म हो जाने दिया गया!

यह हमारे राजनीतिक दलों का दिवालियापन है कि नब्बे प्रतिशत हिन्दुओं से भरे दल व संसद 1975 ई. से ही लगातार नए, नए हिन्दू-विरोधी संशोधनों, कानूनों को पास करते रहे हैं। आर.टी.ई. का बेखटके पास होना उसी क्रम में था। किसी ने इस का मुगलिया, जजिया-नुमा भेद-भाव देखने की फिक्र नहीं की। वही हैरत आज भी कि कथित हिन्दूवादी सत्ताधारी भी इसे जारी रखे हुए हैं। हिन्दू समाज के विरुद्ध धार्मिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक भेद-भाव पर वे गाँधीजी के बंदरों जैसी मुद्रा में हैं। (समाप्त)